WE
Vol 2 No. 1
June 2021

वर्तमान काल में अब्दुलहलीम शरर के उपन्यास पिफरदौस–ए–बरीं की अहमियत

मिथुन कुमार'

मौलवी अब्दुल हलीम शरर के पूर्वजों का सम्बन्ध अरब से था। वह अरब से इराक होते हुए हिन्दुस्तान में आये और दिल्ली, जौनपुर आजमगढ़ होते हुए लखनऊ पहुंचे। शरर का जन्म लखनऊ में 10 जनवरी 1960 को हुआ था। इनके पिता का नाम तपफज़्ज़ुल हुसैन था। इनकी प्रारंभिक शिक्षा लखनऊ में अरबी, पफारसी में हुई। पिफर 9 वर्ष की उम्र में मटिया बुर्ज कलकत्ता चले गये। कलकत्ता में 'अशरापफ' के साथ इनके सम्बन्ध थे। चूँकि शरर तेजस्वी थे इसलिए शिक्षा ग्रहण करते समय जल्दी ही इनमें परिपक्वता आ गयी थी। बाद में वह कलकत्ता से लखनऊ वापस आ गये। उन दिनों लखनऊ में शास्त्राार्थ करने का जबरदस्त खुमार लोगों पर छाया हुआ था। अक्सर इस तरह के शास्त्राार्थ हुआ करते थे। चूँकि शरर ने बचपन से ही तमाम धर्मिक किताबें पढ़ना शुरू कर दिया था इसलिए वह इन शास्त्राार्थों में बड़ी गर्म जोशी से भाग लेते थे। कुछ दिनों बाद उन्होंने लखनऊ से दिल्ली का सपफर तय किया। इन्हीं दिनों इनके मामा की बेटी से इनका विवाह हो गया। दिल्ली पहुँचकर शरर धर्मिक पुस्तकों का गहराई से अध्ययन करते रहे और शास्त्राार्थ में भाग लेते रहे। कुछ दिनों दिल्ली में अध्ययन करने के पश्चात शरर पिफर लखनऊ वापस आ गये। 1883 में अवध अखबार के संपादक के रूप में कार्यभार संभाला। 1884 में इनका पहला उपन्यास 'दिलचस्प' प्रकाशित हुआ। इसके बाद उन्होंने अंग्रेजी सीखी और बंकिम चंद्र चटर्जी के उपन्यास 'दुर्गेशनन्दिनी' का अंग्रेजी अनुवाद पढ़ा और उसका 'जमींदार की बेटी' शीर्षक से उर्दू में अनुवाद किया। यहीं से शरर ने मौलवी बशीरूउ्दीन की सलाह पर 1887 में 'दिलगुदाज़' अख़बार निकाला। पिफर शरर ने वाल्टर इस्काट के उपन्यास 'तिलिस्मान' का अध्ययन किया जिसमें मुसलमानों को धृणा और नपफरत की दृष्टि से देखा गया था और उन पर कटाक्ष किया गया था। इसे प्ढ़कर शरर को जोश आ गया और उन्होंने इस उपन्यास का जवाब लिखने के बारे में सोचा और 1889 में 'हसनएंजलीना' उपन्यास प्रकाशित किया। शरर ने 1890 में 'मंसूर मोहिना' 1896 में 'फ्रलोरअफ्रलोरडा' 1898 में 'अÕयाम–ए–अरब' 1905 में 'यूसुपफ–व–नजमा', 1908 में 'कैस –व–लुबाना' 1910 में 'पिफल्पाना', 1911 में गैबँदा दुल्हन', 1912 में 'ज़वाल–ए–बग़दाद' 1913 में 'हुस्नका डाकू', 1915 में 'खौपफ़नाक मोहब्बत', 1916 में 'पफातेह मपफतूह', 1920 में 'अज़ीज–ए–मिस्र', 1924 में 'नेकी का पफल' आदि लगभग तैंतीस चौंतीस उन्यास लिखे हैं। अब्दुल हलीम शरर की मृत्यु 10 जनवरी 1926 को हुई।

शरर ने जिस दौर में होश संभाला उस समय भारत पर अंग्रेजों का कब्जा हो चुका था और जीवन के हर क्षेत्रा में उन्हीं की संस्कृति और सभ्यता का प्रभाव नज़र आ रहा था। दिन–ब–दिन पश्चिमी सभ्यता लोगों को अपने शिंकजे में जकड़ती जा रही थी। पूरा समाज उथल–पुथल के दौर से गुज़र रहा था। 1857 में अंग्रेजों से बग़ावत अंग्रेजी सत्ता से आज़ादी प्राप्त करने की शुरूआत हुई। लेकिन यह आंदोलन कामयाब न हो सका और अंग्रेजों ने उसे नाकाम बना दिया। इस नाकाम बनाने के अमल में उनका निशाना मुसलमान ज्यादा बने। इसका सीध कारण था यह कि अंग्रेजों से पहले भारत पर मुसलमानों की हुकूमत थी। उस हुकूमत का एक स्वर्णिम इतिहास था। यूँ तो मुसलमान अपने इस स्वर्णिम इतिहास को खोना नहीं चाहते थे, परन्तु अंग्रेजों के सामने वह बेबस थे।

'असिस्टेंट प्रोफेसर उर्दू विभाग दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली–11007

© WE Faculty of Arts

जीवन के हर क्षेत्रा में अंग्रेज उनसे आगे थे। अंग्रेजों को मुसलमानों से यह ख़तरा था कि अपनी सत्ता को दोबारा प्राप्त करने के लिए मुसलमा अवश्य ही प्रसास करेगा। इसलिए उन्हें कमज़ोर बनाने और कमज़ोर करने का हर संभव प्रयास किया गया। इसीलिए मुसलमान अंग्रेजों के निशाने पर ज्यादा थे। 1857 का इतिहास इसका प्रमाण है। शरर एक हनपफी सुन्नी मुसलमान थे और उनमें मुसलमानों के सत्ता खोने का ग़म समाया हुआ था। वह चाहते थे कि मुसलमान अपना वह सवर्णिम इतिहास याद करें क्योकि उस समय वह इतिहास ही उनके अन्दर आत्मविश्वास पैदा कर सकता था। इसी के साथ–साथ शरर यह भी चाहते थे कि मुसलमान स्वयं अपनी और अपने समाज की कमियों को पहचानें। वह उन कारणों को पहचानें जिनकी वजह से सत्ता उनके हाथों से निकल गयी और अपनी उन कमियों को दूर करने का प्रयास करें। अपने समाज को बेहतर बनायें और अपना चरित्रा सुधरे। दरअसल शरर मुसलमानों को 'चरित्रावान' बनाने का प्रयास कर रहे थे जिसका आधर 'इस्लाम' था। वह चाहते थे कि मुलमान अपने मज़हब पर अडिग रहें, उस पर अमल करें तभी उनका कल्याण हो सकता है, उनका चरित्रा सुध्र सकता है और उनमें खोया हुआ आत्मसम्मान और आत्मविश्वास वापस मिला सकता है।

दूसरी तरपफ हिंदू समाज पर भी शरर की नज़र थी। हिन्दू समाज में तमाम बुराईयां पफैली हुई थी। सती प्रथा, जात–पात, छुआछूत, अंध–विश्वास, कर्मकांड आदि तमाम ऐसी बुराइयाँ थी जो हिंदू समाज की बुनियाद को खोखला कर रही थी। हिंदू समाज में तमाम ऐसे समाज सुधरक पैदा हुए जिन्होने इन बुराइयों को समाज से दूर करने का प्रयास किया–राजा राम मोहन राय का ब्रह्मा समाज, स्वामी दयानन्द सरस्वती का आर्य समाज इसके उदाहरण जिन्होंने हिंदू समाज की कई बुराईयों के खिलापफ आवाज उठाई और उन्हें खत्म करने का प्रयास भी किया इन महापुरूषों ने हिंदू समाज को शिक्षित और संगठित करने का भी प्रयास किया। इसलिए हिंदू समाज एक नये रूप में सामने आ रहा था, अपने आप को समय के साथ जोड़ रहा था और विकासोन्मुख था।

हिंदू समाज के विकासोन्मुखी रवैये से शरर भी परिचित थे और वह चाह रहे थे कि मुस्लिम समाज भी अपने ध्र्म के रास्ते पर चलते हुए अपने उस स्वर्णिम इतिहास को याद करे जब हिंदुस्तान पर उनकी सत्ता थी। न सिपर्फ हिंन्दुस्तान बल्कि पूरे संसार में किस प्रकार से इस्लाम ने अपना परचम लहराया है। इसीलिए शरर ने इस्लाम के इतिहास का गहरी नजर से अध्ययन किया और उसी इतिहास की कुछ घटनाओं को बुनियाद बना कर ऐतिहासिक उपन्यास लिखने की शुरूआत की। पिफरदौस–ए–बरीं उन्हीं ऐतिहासिक उपन्यासों में से एक है।

पिफरदौस–ए–बरीं जिस ऐतिहासिक घटना पर आधरित है वह पाँचवीं सदी हिजरी की है जब इस्लामी दुनिया पर एक काले साये के रूप में प्रकट हुई थी। पफारस में इमाम मूसकुद्दीन नाम के बहुत बड़े विद्वान थे जिन की प्रसिर्(चारों तरपफ पफैली हुई थी उनके सभी शिष्यों में तीन शिष्य प्रमुख थे। एक निजामुल मुल्क तूसी केनाल के प्रसि(हुए और उनका बनाया हुआ। मदरसा 'निजामिया आज भी मौजूद है। दूसरे शिश्य उमर खैÕयार हसन बिन सब्बाह थे। पिफरदौस–ए–बरीं की कहानी हसन–बिन–सब्बाह के इस्माइली, सम्प्रदाय पर आधरित है। प्रोपफेसर अली अहमद पफातमी ने अपनी किताब 'अब्दुल हलीम शरर– बहैसियत नावेलनिगार' में हसन–बिन–सूबाह और इस्माइली सम्प्रदाय के बारे में लिखा है।

''मज़हब–ए–इस्माइलिया चूँकि अंदरूनी साजिशों ओर राज़दारों के तरीके से कामय हुआ था और उसके तमाम राज़ सिपर्फ उसी पर ज़ाहिर किये जाते थे जो पूरे तौर पर उनका हम अक़ीदा ;उसी ध्र्म का मानने वालाद्ध हो जाए और उनके मजहब में शामिल हो जाए। धीरे धीरे यह मज़हब पफरोग ;विकासद्ध पाता रहा और उसमें मुख्तलिपफ ;विभिन्नद्ध सोसायटियाँ खुलती रही। ऐसे माहौल में हसन ने आंखे खोलीं और इध्र उध्र घूमता रहा और अपनी जेहानत ;बुिमत्ताद्ध से

©WE-Faculty of Arts

मुतास्सिर ;प्रभावितद्ध करता रहा। मार्के ;पड़ावद्ध सर करता रहा और पिफर उसकी रिसाई ;पहुँचद्ध किला अलतमूनियत में हो गयी और उसने वहीं कयम ;रहनाद्ध किया। प॰ सं॰ 245—246

हसन—बिन—सबाह के बारे में ही पफातमी साहब आगे लिखते हैं कि

‘‘हसन उस किला में पीर बनकर मज़हब—ए—इस्माइलिया की तबलीग ;प्रचारद्ध करने लगा। उसने अपने एतबार से मज़हब—ए—इस्मा इलिया में मुता(िद ;कईद्ध तब्दीलियां ;बदलावद्ध की और एक नये मजहब को जन्म दिया। अपने मुरीदो ;शिष्योंद्ध की तादाद बढ़ाने लगा। रफ़्ता रफ़्ता ;धीरे—धीरेद्ध उसका जोर इस कदर बढ़ा कि उस किला में उसने एक मस्नूई जन्नत ;मनुष्यों का बनाया हुआ स्वर्गद्ध बनायी और खुद अपने पिफरका का खुदा बन बैठा।, पृ॰ सं॰ 246

ज़हिर है कि जब इंसान स्वयं को खुदा समझ लेगा या खुदा बन बैठेगा तो उससे पूरी इंसानियत को खतरा तो होगा ही। उसकी बनाई हुई जन्नत का पफैसला भी वही करेगा और पूरे समाज को गुनाहों के दलदल में ढकेलेगा। इतिहास की इसी घटना को आधर बना कर अब्दुल हलीम शरर ने ‘पिफरदौस—ए—बरी उपन्यास लिखा जो न केवल मुसलमानों बल्कि हर ध्र्म और पंथ के अनुयायियों के लिए एक सबक है। इस उपन्यास के चरित्रा हुसैन और ज़मुर्रद एक दूसरे की मुहब्बत में इस कदर खोजे है कि उन्हें विाय उनके और कुछ नज़र ही नहीं आता। वह हज करने जाते है और रास्तें में तालकान की वादी में जहां जमुर्रद के भाई की कब्र है,पफातिहा पढ़ने लगते हैं। एकाएक परियों का एक झुंड आता है और यह दोनों बेहोश हो जाते हैं। होश आने पर हुसैन जमुर्रद को न पाकर तलाश करता है। उसके बाद उसे ज़मुर्रद की कब नजर आती है और वह उसके लिए बेतहाशा रोने लगता है। अब वह उसी क़ब्र के आस पास रहता है कि एक दिन उसे एक लिपफ़ापफ़ा मिला जिसमें एक पत्रा था। पत्रा में शेख़अली वजूदी का नाम है और उसे वजूदी के पास जाने के लिए कहा गया है हुसैन वजूदी के पास जाता है और उसके हर आदेश का पालन करता है। चूँकि वजूदी को इस्लाम के विद्वानों से खतरा है इसलिए वह हुसैन के हाथों उनका कत्ल करवाना चाहता है। वजूदी, हुसैन से वादा करता है कि यदि वह उन विद्वानों का ;जिन्हें वह इस्लाम का दुश्मन बताता हैद्ध कत्ल करेगा तो उसे सवाब मिलेगा और वह उसकी मुलाकात जन्नत में रह रही ज़मुर्रद से करा देगा। वजूदी ने हुसैन से सबसे पहले इमाम नजमुद्दीन नेशापुरी का कत्ल करवाया और हुसैन को ‘अपनी जन्नत’ में कैद कर रखी गयी ज़मुर्रद से उसकी मुलाकात करयी। पिफर हुसैन के कई इम्तेहान लेकर उससे इमाम नसर—बिन अहमद का कत्ल कराया। पिफर खरशाह के पास भेजा ;जो इनका सबसे बड़ा इमाम हैद्ध लेकिन किसी बात पर नाराज़ होकर खूरशाह ने हुसैन को अपने दरबार से बाहर निकाल दिया। हुसैन पिफर ज़मुर्रद की क़ब्र पर आकर रोता है और कुछ दिनों बाद उसे दो ख़त मिलते है एक उसके लिए और दूसरा बुलगा़न खा़तून के नाम। बुलगान खा़तून नस्—बिन—अहमद की बेटी है और बड़ी बहादुर पफौजी भी। उसका भाई का नाम हलाकू खाँ है जो एक वीर यो(ा की भांति इस उपन्यास में मौजूद है। बुल्गा़न खा़तून अपने भाई हलाकू खाँ के साथ पिफ़रका—ए—बातनिया अर्थात ;झूठ पर आधरित सम्प्रंदायद्ध के किले पर हमला कर देते है। और उनकी उस बनाई हुई जन्नत को नेस्तनाबूद कर देते है।

उपन्यास के आख़िर में हुसैन और ज़मुर्रद का निकाह कराया जाता है और यह दोनों खुशी—खुशी अपना जीवन व्यतीत करने लगते है। दरअसल यही वह कहानी है जिसमें शरर ने इस्लामी इतिहास का एक अध्याय प्रस्तुत किया है जब झूठे ध्र्म के नाम पर कुछ लोगों ने मासूमों को गुमराह किया है। उनका गलत इस्तेमाल किया है, उनकी जिन्दगियों के साथ खेला है। उनका शोषण किया है। न केवल उन मासूमों को इंसान से जानवर बनाया है बल्कि उनके अंदर वहशीपन भी पैदा किया है। उनमें ध्र्माध्ता का बीज बोया है और उसी ध्र्मांध्ता की बदौलत बहुत से लोगों का घर—बार ज़मीन—जायदाद, जीवन सब कुछ ख़त्म कर दिया है।

© WE-Faculty of Arts

किसी भी उपन्यास का सबसे अध्कि महत्व उसका हर ज़माने में अपना अस्तित्व और अपनी अहमियत बनाये रखना है। आज इस्लामी दुनिया जिस दौर से गुजर रही है ऐसे में इस उपन्यास की अहमियत बढ़ जाती है। जिस ध्र्म के नाम पर जो नपफरत के बीज बोये जा रहे हैं दरअसल वह ध्र्म है ही नहीं। ध्र्म उसकी इजाज़त ही नहीं देता है। लेकिन ध्र्म की व्याख्या ऐसी की जा रही है कि मानो वही 'व्याख्या' ही ध्र्म है। इराक और सीरिया मैदान–ए–जंग में तब्दील हो चुके हैं। तमाम उफँची–उफँची बेहतरीन इमारतें खंडहर में तब्दील हो चुकी हैं, ख़ौपफ और सन्नाटा चारों तरपफ नज़र आता है, यदि किसी की आवाज़ आती है तो वह गोलियों, बमों, तोपों और बमवर्षक जहाज़ों की, अवाम के रोने की, चीख़ने की, चिल्लाने की। तमाम खिले हुए चेहरे अब बेरौनक हो चुके हैं, बचपन सिसक रहा है, बच्चों के हंसने खिलखिलाने के जगह रोने, चिल्लाने और भूख से तड़पने की सदायें सुनाई देती हैं। आख़िर यह सब क्यों? यदि जवाब की तलाश की जाए तो जवाब होगा 'ध्र्म की ग़लत व्याख्या' । दरअसल यह गिरोह वही है जो अली वजूदी और ख़ूरशाह का गिरोह था। पूरे उपन्यास के अध्ययन के पश्चात उनके दरम्यान तमाम समानताएं देखी जा सकती हैं। उनकी व्याख्याएं, अंदाज, हथियार, कत्ल, बच्चों का ग़लत इस्तेमाल, औरतों का व्यापार, अपहरण, लूट, बलात्कार, औरतों की बेबसी। यह सब किस लिए 'ध्र्म के लिए'। 'पिफरदौस–ए–बरीं' की ही तरह सीरिया में भी आंतकवादियों ने एक ऐसी ही 'आध्ुनिक जन्नत' बनायी है जहाँ अÕयाशी की सारी वस्तुएं मौजूद हैं। जहाँ लड़ाके 'आराम' करने के लिए आते है। जिस तरह से उपन्यास में 'पिफरका–ए–बातनिया' की बहुत बड़ी पफौज थी उसी तरह से आंतकवादियों की भी एक पफौज है। डॉ॰ शरीपफ़ अहमद ने 'पिफरका–ए–बातनिया' और उसके काम करने के अंदाज़ के बारे में अपनी किताब 'अब्दुल हलीम शरर' में लिखा है कि,

''उन्हीं में से एक यह है कि दूर और नज़दीक का हर वह सियासी व मज़हबी रहनुमा जो बातनीन के ख़िलापफ ज़बान–ए–शमशीर ;बोलताद्ध खोलता है, बातनी रहनुमाँ अपने जोशीले लेकिन सादालौह ;मासूमद्ध मुक्तदियों ;अनुयायियोंद्ध के ज़रिये उसे अपने रास्ते से हटा देते हैं। क़त्ल कराके उसकी ज़बान हमेशा के लिए ख़ामोश करा देते हैं। यह कत्ल ऐसे और इतने होते हैं कि बड़े–बड़े साहिबे जब्रवत व सतवत ;अमीरद्ध महज बतनीन के तसौब्बुर से ही काँप उठते हैं।।'' पृ॰ 185

इस तरह यह पूरा उपन्यास वर्तमान काल के संदर्भ में अपनी अहमियत बरकरार रखते हुए नौजवान पीढ़ी को तमाम तरह के ख़तरों से सतर्क भी करता है। यह नौजवान पीढ़ी आगाह करता है कि वह कहीं किसी अली वजूदी के जाल में न पफंस जाएं और अपना सब कुछ खो दें। इसलिए उन्हें हर तरह के अलीवजूदियों और उनके गिरोह के लोगों से अपने को बचाना होगा ताकि उनका जीवन समाज को बेहतर बनाने का साध्न बन सके ना कि बदतर।

© WE Faculty of Arts